डॉ. रिछारिया और भारतीय कृषि अनुसंधान

सुनील

भारत में हरित क्रांति काफी विवादों में घिर चली है। अब इसके कई दुष्परिणाम दिखाई दे रहे हैं। फिर भी भारत सरकार दूसरी हरित क्रांति की बात कर रही है। हरित क्रांति के पक्ष में यह दलील दी जाती है कि भले ही इसके कुछ दुष्प्रभाव रहे हों किन्तु भारत में अनाज उत्पादन बढ़ाने के लिए यह ज़रूरी थी। भारत को अकाल और पीएल-480 जैसे कलंकों से मुक्ति दिलाने का काम हरित क्रांति ने किया। किन्तु यह भी शायद जानबूझकर पाला पोसा गया एक मिथक है। भारत के एक महान, किंतु गुमनाम कृषि वैज्ञानिक डॉ. रिछारिया के किस्से से यही मालूम चलता है।

डॉ. राधेलाल रिछारिया का जन्म मध्यप्रदेश के होशंगाबाद ज़िले की सिवनी मालवा तहसील के आदिवासी अंचल में स्थित नंदरवाड़ा गांव में 1911 में हुआ था। वाराणसी और नागपुर में उच्च शिक्षा और इंग्लैण्ड के प्रतिष्ठित कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से पीएच.डी. प्राप्त करने के बाद डॉ. रिछारिया कई पदों पर रहे तथा कई फसलों पर अनुसंधान किया। किंतु उनकी विशेषज्ञता चावल में रही।

1959 से 1967 तक वे कटक में केन्द्रीय चावल अनुसंधान संस्थान के निदेशक पद पर रहे। उनके नेतृत्व में वहां के वैज्ञानिक चावल की देशी किस्मों से ज़्यादा पैदावार वाली किस्में विकसित करने पर काम कर रहे थे और उन्हें महत्त्वपूर्ण सफलता भी हासिल हुई थी। किन्तु इसी बीच

डॉ. रिछारिया ने देखा कि उनकी जानकारी के बगैर मनीला (फिलीपीन्स) स्थित अंतर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिक वहां हस्तक्षेप कर रहे हैं तथा विदेशी किस्मों को यहां प्रचलित करने की कोशिश कर रहे हैं।

मनीला के इस संस्थान की स्थापना 1960 में अमरीका के दो प्रतिष्ठानों और फिलिपाइन्स सरकार द्वारा की गई थी। यह संस्थान भारत में हरित क्रांति के नाम पर ज़्यादा पैदावार देने वाली किस्में लादने की कोशिश कर रहा था। डॉ. रिछारिया ने इसका विरोध किया और भारत सरकार को चेतावनी देते हुए पत्र लिखे। उनका कहना था : (1) इनसे भारत में धान की फसल में नई बीमारियां आएंगी और कीट प्रकोप ज़्यादा होगा। (2) इनके साथ रासायनिक खाद और रासायनिक कीटनाशकों का काफी उपयोग करना पड़ेगा, जिससे लागत बढ़ेगी और ज़मीन खराब होगी। (3) इनका आनुवंशिक आधार बहुत संकीर्ण हैं, जिसके कारण बार-बार कुछ साल में पैदावार कम होने लगेगी। (4) भारत में मिट्टी, पानी की उपलब्धता और जलवायु की विविधता के चलते ये किस्में माफिक नहीं है। (5) इनमें सूखे और कम-ज़्यादा पानी को बरदाश्त करने की क्षमता नहीं है। (6) भारत के वैज्ञानिक ऐसी देशी किस्में और ऐसे तरीके विकसित कर रहे हैं, जिनसे चावल की पैदावार काफी बढ़ सकती है। आज हम देख सकते हैं कि पचास साल पहले डॉ. रिछारिया द्वारा दी गई यह चेतावनी कितनी सच साबित हुई है।

किंतु अंतर्राष्ट्रीय ताकतें इसी हरित क्रांति को आगे बढ़ाने के लिए बैचेन थीं, क्योंकि इससे भारत में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए रासायनिक खाद और कीटनाशक दवाइयों का एक बड़ा बाज़ार बनता। विदेशी प्रभाव में आई भारत सरकार ने भी इस चेतावनी पर कोई ध्यान नहीं दिया। उल्टे डॉ. रिछारिया को 1967 में कटक संस्थान के निदेशक पद से हटा दिया गया। अपनी देशभक्ति का यह इनाम मिलने से डॉ. रिछारिया काफी परेशान रहे। वे उच्च न्यायालय भी गए और मुकदमा जीते भी, किंतु तब तक उनकी सेवानिवृत्ति की उम्र हो गई थी।

डॉ. रिछारिया देश के ही नहीं, अंतर्राष्ट्रीय स्तर के

चोटी के कृषि वैज्ञानिक थे। यदि वे सत्ता और विदेशी ताकतों की नाराज़ी मोल न लेते तो शायद भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के निदेशक बनते। उनसे प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी भी बीच-बीच में सलाह लेती थीं। 1971 में मध्यप्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्यामाचरण शुक्ल ने उनको बुलाया और उनके नेतृत्व में रायपुर में 'मध्यप्रदेश चावल अनुसंधान संस्थान' शुरू किया गया। रिछारिया जी एक बार फिर अपने काम में लग गए। छत्तीसगढ़ में घूम-घूम कर उन्होंने धान की 17000 से ज़्यादा किस्में इकट्ठी कीं और उनका एक जीवंत संग्रह बनाया। उन्होंने पाया कि कई किस्में ऐसी हैं, जिनमें विदेशों से आई ज़्यादा पैदावार वाली किस्मों से ज़्यादा उत्पादन मिल सकता है। उन्होंने बताया कि छत्तीसगढ़ क्षेत्र में धान की कम-से-कम 13 ऐसी किस्में हैं, जिनमें प्रति हैक्टर 40-76 क्विंटल तक पैदावार देने की संभावना है। ऐसी किस्में देश के अन्य भागों में भी मिल सकती हैं।

डॉ. रिछारिया का यह काम फिर विदेशी ताकतों की नज़रों में खटकने लगा। अंतर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान मनीला के वैज्ञानिकों ने डॉ. रिछारिया से इन किस्मों के जनन-द्रव्य के लेन-देन का प्रस्ताव रखा था, जिसे उन्होंने नामंज़ूर कर दिया था।1976 में मध्यप्रदेश में चावल अनुसंधान के लिए विश्व बैंक का 4 करोड़ रुपए का एक प्रोजेक्ट आया, जिसमें शर्त रखी गई कि रायपुर के चावल अनुसंधान संस्थान को बंद करके जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय में विलय कर दिया जाए। कारण यह बताया गया कि दो जगह एक ही काम नहीं होना चाहिए। अंतर्राष्ट्रीय साज़िश पूरी हुई तथा रायपुर का संस्थान बंद कर दिया गया।

डॉ. रिछारिया को एक बार फिर बड़ा झटका लगा। फिर भी जीवन के अंतिम वर्षों में वृद्धावस्था के बावजूद वे छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा और अन्य जन संगठनों के साथ देशी बीजों को बचाने के काम में लगे रहे।

दुनिया को एक देशभक्त कृषि वैज्ञानिक के साथ हुई इन साज़िशों का पता तब चला, जब प्रसिद्ध लेखक श्री क्लॉड अल्वारेस का लेख 'द ग्रेट जीन रॉबरी' (ज़बरदस्त जीन डकैती) इलस्ट्रेटेड वीकली में प्रकाशित हुआ। बाद में भारत डोगरा ने भी उनके जीवन और काम के बारे में लिखा। 11 मई 1996 को उनका देहांत हो गया।

रिछारिया एक बार फिर 2002 में चर्चा में आए जब रायपुर के कृषि विश्वविद्यालय ने युरोप की एक बहुराष्ट्रीय कंपनी सिन्जेन्टा से करार किया। इस करार से डॉ. रिछारिया का अद्‌भुत धान संग्रह इस कंपनी को मिल जाता, जिनकी मदद से वह नई किस्में निकालकर उनका पेटेन्ट कराके खूब मुनाफा कमाती। जब बहुत हल्ला मचा तो इस करार को रद्‌द किया गया।

डॉ. रिछारिया के इस किस्से से हमें कई बातें सीखने को मिलती हैं। एक, हरित क्रांति के नाम पर भारत और इसके किसानों के साथ धोखा हुआ है और जान-बूझकर उन्हें एक गलत राह पर धकेल दिया गया है। यदि डॉ. रिछारिया की चेतावनी पर ध्यान दिया गया होता तो आज यह नौबत नहीं आती। हमारे वैज्ञानिक ऐसा अनुसंधान कर रहे थे, जिनसे देशी किस्मों से और देशी तरीकों से हमारी कृषि पैदावार बढ़ सकती थी। किन्तु एक साज़िश के तहत उन्हें आगे नहीं बढ़ने दिया गया। आज भी हमारी कृषि नीति देशहित-जनहित के बजाय देशी-विदेशी कंपनियों के स्वार्थों को ज़्यादा समर्पित है।

दो, भारत सरकार और सत्ता प्रतिष्ठानों में विदेशी घुसपैठ, विदेशी प्रभाव और दबाव काफी ज़्यादा है। इसके कारण कई बार उनके फैसले देशहित-जनहित की पूर्ति करने की बजाय विदेशी साम्राज्यवादी हितों की पूर्ति करते हैं। इसीलिए देश ने विकास का एक गलत अनुपयुक्त रास्ता चुन लिया है।

तीन, भारत के वैज्ञानिक और बुद्धिजीवी भी ज़्यादातर अपने ज़मीर को गिरवी रखकर विदेशी नकल और सत्ता के साथ समझौता कर लेते हैं। रिछारिया के समकालीन कुछ वैज्ञानिक विदेशी निर्देशों को पूरी तरह स्वीकार करते हुए सर्वोच्च पदों पर पहुंचे थे। डॉ. रिछारिया के विपरीत ये वैज्ञानिक अवसरवादी, स्वार्थी और सत्ता के साथ समझौता करने वाली धारा का प्रतिनिधित्व करते हैं। अफसोस की बात है कि रिछारिया जैसे लोग बहुत बिरले हैं। क्या हम अब भी चेतेंगे? क्या डॉ. रिछारिया का संघर्ष बेकार जाएगा?

(स्रोत फीचर्स)